॥ ॐ श्रीपरमात्मने नमः॥

सर्वोपरि साधन–शरणागति

परमश्रद्धेय स्वामीजी श्रीरामसुखदासजी महाराज

॥ ॐ श्रीपरमात्मने नमः ॥

सर्वोपरि साधन—शरणागति

राम.....राम.....राम, राम.....राम.....राम, राम.....राम.....राम.....

श्रीमद्भगवद्गीतामें शरणागतिकी बात मुख्य है। भगवान् श्रीकृष्ण और अर्जुन साथ-साथ तो पहले रहते ही थे, पर भगवान्‌ने अर्जुनको गीताका उपदेश नहीं दिया। परन्तु जब अर्जुन '**शाधि मां त्वां प्रपन्नम्**' (गीता २। ७) कहकर भगवान्‌के शरण हुआ, तब भगवान्‌ने उसको गीताका उपदेश दिया। गीताके अन्तमें भगवान्‌ने एक ही बात कही कि अनन्यभावसे मेरी शरणमें आ जा—'**मामेकं शरणं व्रज**' (गीता १८। ६६)। जैसे, लड़की पहले अपने माँ-बापकी होती है, पर जब वह ससुरालकी हो जाती है, तब वह माँ-बापकी नहीं रहती। इसी तरहसे आप अपने-आपको भगवान्‌को सौंप दो कि अब हम संसारके नहीं रहे, भगवान्‌के हो गये। जैसे साधु होता है तो भीतरसे मान लेता है कि अब हम साधु हो गये, ऐसे ही आप भीतरका भाव बदल दें कि अब हम भगवान्‌के हो गये। फिर आपके द्वारा स्वतः-स्वाभाविक साधन होगा, करना नहीं पड़ेगा। लड़की ससुरालकी हो जाती है तो फिर वह ससुरालका काम स्वतः-स्वाभाविक करती है। उसको मेहनत नहीं करनी पड़ती कि मेरेको कैसे बोलना चाहिये, कैसे व्यवहार करना चाहिये, आदि। इसी तरहसे आप प्रभुके चरणोंकी शरण हो जायँ तो आपके द्वारा वैसी स्वाभाविक प्रवृत्ति होने लगेगी।

भगवान् कहते हैं—'**सर्वगुह्यतमं भूयः शृणु मे परमं वचः**' (गीता १८। ६४) 'सबसे अत्यन्त गोपनीय वचन तू फिर मुझसे सुन।'। यह '**सर्वगुह्यतम्**' पद गीताभरमें एक बार ही आया है। भगवान्‌का वह सबसे अत्यन्त गोपनीय वचन है—

सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज।
अहं त्वा सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः॥

(गीता १८। ६६)

'सम्पूर्ण धर्मोंका आश्रय छोड़कर तू केवल मेरी शरणमें आ जा। मैं तुझे सम्पूर्ण पापोंसे मुक्त कर दूँगा, चिन्ता मत कर।'

जैसे कोई शिष्य हो जाता है तो वह उस गुरुका हो जाता है, अथवा कोई किसीकी गोद चला जाता है तो वह जिनकी गोद जाता है, उन माँ-बापका हो जाता है। इस तरहसे अगर भीतरसे भाव बदल दें कि अब हम भगवान्‌के हो गये तो बहुत लाभ होगा। शरण होनेपर पाप दूर करना नहीं पड़ेगा, भगवान् ही सम्पूर्ण पापोंसे मुक्त कर देंगे। इसलिये शरण होनेपर भक्त निश्चिन्त हो जाता है, निर्भय हो जाता है, निःशंक हो जाता है, निःशोक हो जाता है अर्थात् न चिन्ता रहती है, न भय रहता है, न शंका रहती है, न शोक रहता है।

जो जाको शरणो गहै, ताकहँ ताकी लाज।
उलटे जल मछली चलै, बह्यो जात गजरात॥

छोटी-सी मछली भी जल-प्रवाहके सामने चलती है! जलकी धारा ऊपर-से गिरती हो तो वह धारापर ऊपर चढ़ जाती है; क्योंकि वह जलके शरण होती है। परन्तु हाथी बड़ा बलवान् होनेपर भी बाढ़के जलमें बह जाता है; क्योंकि वह जंगलके शरण होता है। अगर जल मछलीका त्याग कर भगा दे तो वह कहाँ जायगी! इस तरहसे भगवान्‌के चरणोंके शरण होनेपर भक्त खुला, स्वतन्त्र हो जाता है। उसको खुदकी कोई चिन्ता नहीं होती कि कैसे निर्वाह होगा, मरनेके बाद क्या होगा, आदि। उसकी सब चिन्ता भगवान् करते हैं। वह निश्चिन्त, निर्भय हो जाता है।

चिन्ता दीनदयाल को, मो मन सदा अनन्द।
जायो सो प्रतिपालसी, रामदास गोबिन्द॥

भगवान्‌के समान दूसरा कोई है ही नहीं। अर्जुन कहता है—'**न त्वत्समोऽस्त्यभ्यधिकः कुतोऽन्यो**' (गीता ११। ४३) 'इस त्रिलोकीमें आपके समान भी दूसरा कोई नहीं है, फिर आपसे अधिक तो हो ही कैसे सकता है!' ऐसे प्रभुके जब शरण हो गये तो फिर क्या बाकी रह गया? यह मुफ्तमें कल्याण होनेकी बात है! इसमें बाधक है—अहंकार, अभिमान। मैं, कुछ हूँ, मैं कुछ कर सकता हूँ—यह अभिमान बाधक होता है। अभिमान-रहित होकर शरण हो जाय तो जैसे नींद अपने-आप आ जाती है, नींद लेनेके लिये परिश्रम करना नहीं पड़ता, ऐसे ही निश्चिन्तता, निर्भयता स्वतः-स्वाभाविक आ जाती है। उसको करना कुछ भी नहीं पड़ता। ऐसा बढ़िया, सर्वोपरि साधन है भगवान्‌के शरण होना! अब चिन्ता किस बातकी! चिन्ता भगवान् करें! जैसे बालक खेलते रहते हैं। पिताके घाटा लगा कि मुनाफा हुआ, क्या हुआ—इसकी उनको परवाह ही नहीं है। ऐसे ही शरण होनेवाला निश्चिन्त, निर्भय हो जाता है।

शरणागतिको गीतामें सर्वोपरि बताया गया है। केवल अपनेको बदल दे। जैसे कुँआरी कन्या विवाह होनेपर अपनेको बदल देती है। फिर वह सदा सुहागिन रहती है। ऐसे ही शरण होनेवाला सदाके लिए, जन्म-जन्मान्तरके लिये निश्चिन्त हो जाता है। शरणागतिमें भगवान्‌ने चार बातें बतायी हैं—'**मन्मना भव मद्भक्तो मद्याजी मां नमस्कुरु**' (गीता ९। ३४; १८। ६५) 'तू मेरा भक्त हो जा, मुझमें मनवाला हो जा, मेरा पूजन करनेवाला हो जा और मुझे नमस्कार कर'।

'**मन्मना भव**'—मन भगवान्‌के अर्पण कर दे। मन, शरीरको जब अपना मानते हैं, तब ये खराब होते हैं। इनको भगवान्‌के अर्पण कर दो तो निश्चिन्त हो जाओगे। इसलिये मन भगवान्‌को दे दें। मनसे भगवान्‌का ही चिन्तन करें और भगवान्‌से ही प्रेम करें। भगवान मीठे लगें, अच्छे लगें, प्यारे लगें। जैसे अपने भाई-बन्धु, माता-पिता अच्छे लगते हैं, ऐसे ही भगवान् अच्छे लगें। यह संसार हमारा नहीं है। यहाँ तो हम आये हैं और जाना है। परन्तु भगवानके यहाँ न आना है न जाना है। वहाँ सदाके लिये हैं। इसलिये भगवान्‌के शरण होना बहुत बढ़िया साधन है। '**मां नमस्कुरु**'—भगवान्‌को नमस्कार कर। नमस्कार करनेका तात्पर्य है कि वे चाहे सुख भेजें, चाहे दुःख भेजें, उसमें प्रसन्न-ही-प्रसन्न रहे। जैसे, अच्छा वैद्य दवाई चाहे कड़वी दे, चाहे मीठी दे, वह रोग दूर करनेके लिये है। दुकानपर माल लेनेके लिए जाते हैं तो पहले उसको चखते हैं, पर वैद्यके यहाँ दवाई चखते नहीं हैं। वह जो दे दे, वही ठीक है। ऐसे ही भगवान्‌के शरण होनेपर चाहे सुख आये, चाहे दुःख आये, कोई भी परिस्थिति आ जाय, अपनेको आनन्द-ही-आनन्द होना चाहिये। बुखार आ जाय तो आनन्द, स्वास्थ्य ठीक हो जाय तो आनन्द, धन आ जाय तो आनन्द, धन चला जाय तो आनन्द, घरवाले मर जायँ तो आनन्द, जन्म जायँ तो आनन्द!! जैसे वैद्यने जो दिया, वही ठीक है, ऐसे ही भगवानने जो दिया, वही ठीक है।

जैसे धोबी कपड़ेको साफ करनेके लिये उसको शिलापर पछाड़ता है, पानीमें उबालता है, ऐसे ही भगवान् हमारेको साफ करनेके लिये, हमारे पाप-ताप सब दूर करनेके लिये दुःख भेजते हैं। शरणागत भक्तको उस दुःखमें भी आनन्द मिलता है! '**मां नमस्कुरु**'—नमस्कार करनेका तात्पर्य है कि आप चाहे दण्ड दो, चाहे पुरस्कार दो, आपकी मरजी। मेरेको सब स्वीकार है। ऐसी बात होनेपर बहुत सुख, बहुत आनन्द, बहुत प्रसन्नता, बहुत विचित्रता होती है!

वास्तवमें भगवान्‌के भक्त भगवान्‌के साथ घुल-मिलकर रहते हैं। वे भगवान्‌के घरके आदमी हो

जाते हैं। मजदूरको तो काम-धन्धा करनेपर पैसा मिलता है कि इतना काम किया है तो इतना पैसे मिलेंगे, और काम नहीं किया तो पैसे भी नहीं मिलेंगे। परन्तु घरका आदमी काम करे तो भी वही बात और न करे तो भी वही बात! क्योंकि वह घरका आदमी है। वह बीमार पड़ता है और खर्चा लगता है तो कोई एहसान नहीं। मजदूरकी तो ड्यूटी होती है, पर उसकी ड्यूटी नहीं होती। वह तो रात-दिन घरका काम करता है। ऐसे ही शरणागत भक्तके द्वारा रात-दिन भगवान्‌का भजन होता है। गोस्वामी तुलसीदासजी महाराज कहते हैं—

बिगरी जनम अनेक की सुधरै अबहीं आजु।
होहि राम को नाम जपु तुलसी तजि कुसमाजु॥

(दोहावली २२)

अनेक जन्मोंकी बिगड़ी हुई बात आज और अभी सुधर सकती है। कैसे? भगवान्‌का होकर नामका जप करे। भगवान्‌का होनेपर सदा मौज रहती है, आनन्द रहता है—***'सदा दीवाली संत की, आठों पहर आनंद'***। दुःख, सन्ताप, चिन्ता भगवान् करें! हमने तो अपने-आपको भगवान्‌को दे दिया। अब चिन्ता नहीं करेंगे। शरण भी हो जायँ और चिन्ता भी करें, क्यों? हमारी क्या दशा होगी, सद्‌गति होगी या दुर्गति होगी, इससे हमें क्या मतलब? ***'जाहि बिधि राखे राम, ताहि विधि रहिये, सीताराम सीताराम सीताराम कहिये'***। भगवान्‌की मरजीमें अपनी मरजी मिला दें।

ऋषिकेश, स्वर्गाश्रममें सत्संग हो रहा था। गीताप्रेसके संस्थापक, संचालक, संरक्षक, उत्पादक श्रीजयदयालजी गोयन्दका बड़े अच्छे सन्त थे। वे गृहस्थाश्रममें थे। सत्संगमें बात चली तो लोग कहने लगे कि हम जैसा चाहें, वैसा (मनचाहा) नहीं होता। गोयन्दकाजी बोले कि हमारे तो सदा मनचाहा ही होता है! मैं बोला कि यह नयी बात कैसे हुई! लोग तो कहते हैं कि हमारा मनचाहा नहीं होता और आप कहते हैं कि हमारे तो मनचाहा ही होता है! यह क्या अटकल है, क्या उपाय है? वे बोले कि हमने अपनी चाह भगवान्‌की चाहमें मिला दी।

राम कीन्ह चाहहिं सोइ होई। करै अन्यथा अस नहिं कोई॥

(मानस, बाल० १२८। १)

भगवान् जो चाहें, वही हमारी चाह! हम अपनी कोई अलग चाह रखते ही नहीं। भगवान्‌के शरण हो गये तो फिर अलग चाह थोड़े ही रखते हैं! इसलिये हमारा तो हरदम मनचाहा ही होता है। जो होता है, उसीमें प्रसन्न हैं! यह होना चाहिये, यह नहीं होना चाहिये—यह तो आफत है! लोग कहते हैं कि हमारे भीतर शान्ति नहीं है तो मैं कहता हूँ कि आपने ये दो बातें पकड़ लीं कि ऐसा होना चाहिये, ऐसा नहीं होना चाहिये। अब अशान्ति-ही-अशान्ति होगी! अब शान्ति नहीं मिलेगी। इसलिये जो भगवान् करें, वही होना चाहिये। अपनी मरजी भगवान्‌पर छोड़ दें तो चिन्ता, फिक्र सब मिट जायगी, मौज हो जायगी!

मीराबाईने कहा—***'मेरे तो गिरधर गोपाल, दूसरो न कोई'***। भगवान्‌के सिवाय और कोई मेरा नहीं है। अब भगवान्‌को छोड़कर कहाँ जायँ! भगवान्‌का घर ही हमारा घर है। हम भगवान्‌के घरमें ही रहते हैं और हमें वहीं रहना है। फिर दुःख नहीं होगा, जलन नहीं होगी, सन्ताप नहीं होगा, अशान्ति नहीं होगी। हरदम शान्ति रहेगी।

भगवान्‌के शरण होनेवालेके समान कोई सन्त नहीं है। एक विलक्षण बात है कि जो भगवान्‌के सर्वथा शरण हो जाता है, उसमें भगवान् उतर आते हैं! उसमें भगवान्‌का अवतार हो जाता है! कारण कि उसके पास जो था, वह सब दे दिया। जैसे, स्त्री पतिकी हो जाती है और पति पढ़ा-लिखा

पण्डित हो तो वह पढ़ी-लिखी न होनेपर भी पण्डितानी कहलाती है! डॉक्टरकी पत्नी कुछ भी न जाननेपर भी डॉक्टरनी कहलाती है! उसमें डॉक्टर उतर आया, पण्डित उतर आया! पति-पत्नीमें तो शरीर अलग-अलग हैं, पर भक्त और भगवान् अलग-अलग नहीं हैं। कितनी मौजकी बात है!

भरतजी जब चित्रकूट जाते समय शृङ्गवेरपुर पहुँचे तो सामने निषादराज गुहको देखते ही माताओंको दिखा कि ये लखनलाल हैं! अयोध्यावासियोंको भी उनमें लखनलाल दीखे!

जानि लखन सम देहिं असीसा। जिअहु सुखी सय लाख बरीसा॥
निरखि निषादु नगर नर नारी। भए सुखी जनु लखनु निहारी॥

(मानस, अयोध्या० १९६। ३)

'रानियाँ निषादको लक्ष्मणजीके समान समझकर आशीर्वाद देती हैं कि तुम सौ लाख वर्षोंतक सुखपूर्वक जिओ। नगरके स्त्री-पुरुष निषादको देखकर ऐसे सुखी हुए, मानो लक्ष्मणजीको देख रहे हों।'

कारण क्या था? रात्रिमें लक्ष्मणजीने निषादराजको गीता (लक्ष्मणगीता) कही। निषादराज लक्ष्मणजीके शरण हो गये। इसलिये निषादराजको देखते ही लक्ष्मणजी याद आते हैं। साधुको देखते ही 'जय रामजीकी' क्यों याद आता है? क्योंकि इस वेषमें ऐसी बात है। वृक्षके ऊपर एक ध्वजा लगा दें तो उसको कोई काटता नहीं।

मोरें मन प्रभु अस बिस्वासा। राम ते अधिक राम कर दासा॥
राम सिंधु घन सज्जन धीरा। चंदन तरु हरि संत समीरा॥

(मानस, उत्तर० १२०। ८-९)

'हे प्रभो! मेरे मनमें तो ऐसा विश्वास है कि भगवान् श्रीरामके दास रामजीसे भी बढ़कर हैं। श्रीरामजी समुद्र हैं तो धीर सन्त पुरुष मेघ हैं। श्रीरामजी चन्दनके वृक्ष हैं तो सन्त पवन हैं।'

भगवान् तो समुद्र हैं और भगवान्‌के भक्त बादल हैं। समुद्र आ जाय तो प्रलय हो जाता है और बादल बरस जाय तो सब नदियाँ प्रसन्न हो जाती हैं! समुद्रमें खारा जल होता है और वर्षामें मीठा जल होता है। भगवान्‌के (गीतामें आये) भावोंको जब भगवान्‌के भक्त कहते हैं तो उसमें मिठास बहुत होती है!

भगवान्‌के शरणमें कोई आ जाय, सबके लिए खुली है। किसीके लिये मना नहीं है। स्त्री हो, पुरुष हो, पढ़ा-लिखा हो, अपढ़ हो, दुष्ट हो, पापी हो, भगवान्‌के शरण हो जाय तो पाप-ताप खत्म! वह शुद्ध, पवित्र, निर्मल हो जाता है! सब मल दूर हो जाते हैं! यह साधन बड़ा सुगम है। परन्तु अभिमानीके लिए कठिन है! अपना कपड़ा हो तो उसको हम कहीं रख दें, सिरपर रख दें, पैरोंपर रख दें, कहीं रख दें। ऐसे जो भगवान्‌का अपना हो जाता है, उसको भगवान् कहीं रख दें। भगवान् नि:संकोच हो जाते हैं और वह निर्भय हो जाता है! भगवान्‌के ऊपर कोई एहसान नहीं! अत: यह साधन बहुत सुगम है, सरल है और इसमें तत्काल सिद्धि होती है। परन्तु अहम्‌को बदलना पड़ता है। जैसे कन्या कुँआरी नहीं कहलाती, ऐसे वह कुँआरा नहीं कहलाता, भगवान्‌का हो जाता है। इसलिये भगवान्‌का हो जाना सबसे बढ़िया, सरल, सुगम और सर्वोपरि साधन है।

नारायण! नारायण!! नारायण!!!

[आषाढ़ शुक्ल पंचमी वि०सं० २०५२, दिनांक ४.७.१९९५ को
प्रातः ५ बजे मोदीनगरमें दिया गया प्रवचन]